|| अर्हं नमः ||

आत्मकथा
ADVENTURE SERIES

TIME

the last doctor

युगप्रधानाचार्यसम प.पू.चन्द्रशेखर वि.म.सा.

समर्पण

जिन्होंने किसी भी तरह की परिस्थिति में

अपनी मनस्थिति स्थिर रखी..

दूसरो को दोष न देकर खुद के कर्मो को दोष दिया...

खुद का पुरषार्थ नही छोडा..

दुःख देनेवालों को निमित्तमात्र माना...

मु.गुणहंस वि.म.सा.

दि:10.04.2018

गुजराजी वाडी, चेन्नई

7.00 a.m

तत्त्व TWILIGHT SERIES

जिनशासन में ENTRY PASS

महोत्सव या मोहोत्सव

मुझे वेष श्रमण का मिलना रे..

अमृतवेल

The Way of Legal Murder

सुपात्रदान

॥ अर्हं नमः ॥

आत्मकथा
ADVENTURE SERIES

युगप्रधानाचार्यसम प.पू.चन्द्रशेखर वि.म.सा.

दिव्य आशीर्वाद

सच्चारित्र चुडामणि कर्म साहित्य निष्णांत सिद्धांतमहोदधि
पू.आ. श्री प्रेमसूरीश्वरजी म.सा. एवं उन के विनेय
युगप्रधानाचार्यसम शासन प्रभावक गुरुदेव प.पू.श्री चन्द्रशेखर विजयजी म.सा.

* निश्रादाता *

सिद्धांतदिवाकर गच्छाधिपति आ.श्री जयघोषसूरीश्वरजी म.सा.
सरलस्वभावी प.पू.आ.श्री हंसकीर्तिसूरीश्वरजी म.सा.

लेखक

मुनिराज श्री गुणहंसविजयजी म.सा.

Copies - 2,000

अनुवादक

अध्यापिकावर्य सुश्राविका काल्पनाबहन

* प्रकाशक *

कमल प्रकाशन ट्रस्ट
102-ए, चन्दनबाला कोम्पलेक्स, आनंद नगर,
पोस्ट ऑफिस के सामने, झवेरा, पालडी, अहमदाबाद - 7.

* प्राप्ति स्थल *

नरेश जैन
373, Mint Street, Rajendra Complex,
(Near Mahashakthi Hotel)
Chennai - 600 079. Ph: 9841067888

मनोज जैन
Shree Adinath Enterprises
7, Perumal Mudali Street,
Sowcrapet, Chennai - 600 079.
Ph: 9840398344

पीयुष जैन
Sri Divyam
122, Anna Pillai Street,
Sowcrapet, Chennai - 600 079.
Ph: 9884232891

Design and Printed by:

Divyam
imagination alive
Chennai. Ph : 044-49580318
9884232891/8148836497

अर्हं नमः

समय-काल तमाम रोगो का, दुःखो का औषधि है।

कर्म के कातिल उदय में जब कोई भी उपाय काम नहि आता, तब एक ही बात ध्यान में रखो 'काल की राह देखो'

एक दिन आएगा,

बुरा समय जाएगा,

अच्छा समय आएगा,

रोग-शोक जाएंगे,

आरोग्य-प्रसन्नता आएगी

काल! काल! काल!

सुश्राविका पद्माबहेन की आत्मकथा हम को काल की बात अवश्य शिखाएगी।

युगप्रधानाचार्यसम पूज्य पंन्यास
चन्द्रशेखरविजयजी के शिष्य
गुणहंसविजय

''साहेबजी! गिरनार की नव्वाणु में जो आनंद आया है, उसका वर्णन करने के लिए मेरे पास कोई शब्द नहीं है। नेमिनाथ दादा का प्रक्षाल, शाम की आरती, वहाँ के पूजारीओं की अद्‌भूत भक्ति, प्रभु के सामने उनका चामर नृत्य.... सब कुछ अद्‌भूत! जाने कि देवलोक के दृश्य का सर्जन न हुआ हो ऐसा लगता है...''18 साल की आरतीबहन गिरनार नव्वाणु करके वापस चेन्नई आने के बाद, जब वंदन करने आये, तब दो महिने के अपने घने आनंद को व्यक्त करने लगे।

S.P.R ओशियन हाइट्स त्रिनेत्र बिल्डिंग के पहले माले के फ्लेट उपाश्रय में हम बिराजमान थे। लगभग ग्यारह बजने आये थे। आरतीबेन और उनकी मम्मी पद्माबहन वंदन करने के लिए आये थे। पद्माबहन का स्वभाव प्रेमल, धार्मिक और उनका सबसे मुख्य गुण था जिनवचन सुनने की तीव्ररूचि!

शुश्रुषा यह सम्यग दर्शन का लिंग है, यह बात हम सबने सुनी तो है, परंतु उसका अनुभव अपने में अथवा दूसरे बहुत कम व्यक्तिओं में देखने को मिलता है। प्रवचन श्रोता भी **Routine** की तरह प्रवचन में आते है। देर से आते है, जल्दी चले जाते है, चौमासे के 50 दिनों में ही आते है। इच्छा के मालिक होने से इच्छा न हो तो नहीं भी आते है.. ऐसा-ऐसा तो बहुत बार देखने को मिलता है। जबकि इस बहन का ये गुण मैंने बराबर देखा है।

एक दिन इन्होंने ही कहा था कि ''साहेबजी! आराधना भवन में आपका रविवार का प्रवचन था। मैं तो 2 **K.M** दूर रहती हुँ, फिर भी प्रवचन नहीं छोडती। उस दिन भी सवा नौ बजे

प्रवचन में पहुँचने के लिए मैं चार बजे उठ गई।

घर के सभी काम फटाफट निपटा कर नौ बजे प्रवचन के लिए निकल रही थी, तभी सासुजी ने घर का कोई नया काम करने के लिए कहा। उनका भाव मुझे हैरान करने का बिल्कुल नही था। उन्होंने तो सहज ही काम सौंपा था, परंतु मैं ना नही कह सकी और घर का काम करने लगी। परंतु साहेबजी! एक-डेढ घंटे वहाँ आराधना भवन में आपका प्रवचन चला, ज्ञानवर्षा हुई और मैं यहाँ सतत रोती ही रही। काम करते करते भी अश्रुवर्षा बिल्कुल भी नहीं रुकी... प्रवचन खोने का दुःख जलाता ही रहा-रूलाता ही रहा ''।

ये बोलते समय भी पद्मबहन रो रहे थे।

कोंडीतोप नवग्रह मंदिर के उपाश्रय में भी इन्होंने मुझे प्रेरणा की थी कि ''साहेबजी! आप सबसे कहते हो कि एक भी व्यक्ति प्रवचन न चूके, दूसरा सब कुछ गौण हो जाये तो चलेगा।'' ये सिर्फ मेरे प्रवचन की बात नही थी, परंतु जिनवचन की बात थी, फिर उसे कोई भी महात्मा दें।)

इन दो तीन प्रसंगो से मुझे स्पष्ट लगा कि *'इस श्राविका में शुश्रुषा गुण तो गजब का है और इसीलिए ही सम्यग्दर्शन नामक जो बहुत कीमती गुण गिना जाता है, वो इनमें होने की शक्यता हो सकती है। अर्थात् वो गुण इनमे होने की शक्यता को हम नकार नहीं सकते..'*

मैंने इनको गिरनार नव्वाणु की प्रेरणा की थी। इसीलिए ही वो मेरा उपकार मानने आये थे।। मम्मी तो घर की जवाबदारी के कारण जा नही सके, परंतु उन्होंने अपनी बेटी को जबरदस्ती भेज दिया।

''दीक्षा की भावना है?'' ओघा उँचा करके, एक भी शब्द बोले बिना ही मैंने मात्र भावो के द्वारा ये प्रश्न पूछ लिया।

मेरे आश्चर्य के बीच उन्होंने 'हाँ' सूचक मस्तक हिलाया और उसी के साथ ही वो तो खुशी के आंसु बरसाने लगे। उनकी आत्मा की दुनियाँ बदल गयी थी। वे अब संसार के रस्ते एक डग भी भरना नही चाहते थे ऐसा मुझे लगा।

''सचमुच?'' जैसे कि उनके जवाब पर मुझे विश्वास ही नही हो रहा हो, वैसे मैंने फिर से प्रश्न पूछा।

दुगुने जोर से मस्तक झुकाकर उन्होंने दृढ़ता के साथ हाँ कहा। आंसु का प्रवाह वेग से बहने लगा।

''तो फिर राह किसकी देख रहे हो? किसके पास दीक्षा लेनी है? गुरु निश्चित किये है?'' मैंने उनको भविष्य के लिए प्रश्न पूछ ही लिया। गुरु के विषय में मेरा अभिप्राय एकदम स्पष्ट है कि

(1) अगर मुमुक्षुओं ने अपने गुरु नक्की कर ही रखे हो और मुझे इस बात का पता हो कि *'वो गुरु महाव्रतों में तो अच्छे ही है'*, तो फिर मैं उनको उसी रास्ते आगे बढने की प्रेरणा करता हुँ। उनके गुरु की प्रशंसा भी कर लेता हुँ।

(2) अगर उनके निश्चित किए हुए गुरु विचित्र हो, गडबड वाले हो... तो मुमुक्षु को प्रेरणा करता हुँ कि 'आप प्रेक्टीस करना। एक भी दिन छुट्टी मारे बिना लगातार 6 महिने गुरु के साथ रहने के बाद निर्णय लेना। और इन 6 महिनो के दौरान गुरु में इतनी-इतनी वस्तुओ की जाँच करना अर्थात् परखना...'

(3) अगर उन्होंने निश्चित किए हुए गुरु को मैं नहीं

पहचानता, तो भी यही प्रेरणा करता हुँ कि ''आपके गुरु को मै नही जानता, इसलिए वो अच्छे है या बुरे? इसका निर्णय मैं तो कर ही नही सकता। आपको ही उनके साथ 6 महिने रह कर इसका निर्णय करना है। जल्दबाजी नही करनी चाहिए। पूरी जिंदगी का प्रश्न है।''

(4) अगर उनके कोई गुरु निश्चित न हो, तो मेरे ध्यान में हो ऐसे 5-10 ग्रुपो के नाम बता देता हुँ और कहता हुँ कि ''इनमें से आप गुरु निश्चित कर सकते हो। इनके सिवाय भी बहुत से ग्रुप होंगे, जो इनसे भी ज्यादा अच्छे हो, परंतु मुझे उनकी जानकारी न होने से, उनसे पहचान न होने से उनका नाम मैं बता नहीं सकता।

उस बहन की दीक्षा की भावना जानकर मैंने प्रश्न पूछा की ''गुरु कौन?'' उन्होंने जवाब दिया ''नेहा बहन!''

मैं चौक गया। फिर बात समझ में आते ही मैं हँसने लगा। चेन्नई की दो सगी बहने नेहा-निधि बहेन ता 25.4.2018 के दिन दीक्षा लेनेवाली है। उनमें से नेहा बहेन को ये गुरु बनाने की बात कह रहे है।

पढने में निधि बहन मास्टर है। एक घंटे में नयी 25 गाथा याद कर सकते है। 7 वर्ष में 20,000 गाथा याद करने की प्रतिज्ञा इन्होंने ली है। सिर्फ 20 वर्ष की छोटी उम्र में शास्त्रभ्यास के क्षेत्र में उंची छलांगे लगायी है। धर्मबिन्दु-पंचाशक-तर्कसंग्रह-प्रतिमाशतक-विशेषावश्यक भाष्य में 5 ज्ञान का वर्णन (कुल 400 पेज) वगेरे-वगेरे अनेक ग्रंथ...

नेहा बहन अभ्यास में इतने आगे नहि है, परंतु उनका पुण्य

जोरदार! मैने अनेक कॉलेज की बहनों के मुख से भी ऐसे शब्द सुने है कि ''हम उनकी शिष्या बनेंगे।''

इसलिए अभी 18 वर्ष की आरती बहन के शब्दो से मुझे ज्यादा आश्चर्य नही हुआ।

''बहुत ही अच्छा बहन! तो फिर अब तालीम लेनी शुरु करो। देर क्या करनी?'' मैंने कहा, परंतु ये सुनकर माँ बेटी दोनों के चेहरे उतर गये। शोकमग्न बन गए...

''क्यों? किस विचार मे पड गये? क्या तकलीफ है?''

''तकलीफ तो कुछ नही है, परंतु इसके पप्पा हाँ नही कहेंगे। इसके पप्पा क्याँ? परिवार मे कोई भी व्यक्ति हाँ नही कहेंगा।'' पद्माबेन बोले।

''ये तो सिर्फ आपके घर में ही नही, किसी के भी घर में मुमुक्षु को दीक्षा के लिए कौन हाँ कहेता है? वास्तविक्तामें तो उनको ही हाँ कहलानी पडती है, थोडी जिद करनी पडती है, आयंबिल करने पडते है। उसके बाद ही इजाजत मिलती है।'' मैने अपना वर्षो का अनुभव पेश किया।

''आपकी बात वैसे तो सच है, परंतु इस प्रकार से भी इजाजत मिलनी मुश्किल लगती है।'' बहन बोले।

''क्युं?'' मुझे लगा कि वे परिवार से बहुत ज्यादा घबराते है और इसलिए मैंने पूछा।

''क्यों कि इसके पप्पा को मैं और ये बहुत-बहुत मेहनत के बाद प्राप्त हुए है। हम दोनों उनके लिए बहुत ही कीमती है।'' बहन एकदम गंभीरता के साथ बोले।

मुझे कुछ भी समझ में नहीं आया। बेटी के लिए तो

कल्पना कर ली कि *'शादी के बहुत वर्षो के बाद अगर इसका जन्म हुआ हो तो ये किमती हो सकती है।'* परंतु पत्नी के लिए किमती शब्द सेट ही नही हो रहा था। जबकि बहन तो कह रहे है कि "हम दोनों इसके पप्पा के लिए बहुत कीमती है। इसलिए वो इसको दीक्षा के लिए इजाजत नही दे सकेंगे। बहुत कीमती चीज, बहुत प्यारी बन जाती है ना!"

"आप क्या कहना चाहते हो, वो मुझे समझ में नही आया, स्पष्ट समझाओ तो समझ आये। " मैंने जिज्ञासापूर्वक प्रश्न किया और पद्मा बहेन 18 साल पहले के दर्दनाक इतिहास के अंदर डूब गए। आंखे फट जाये , खून जम जाये, करुणा-क्रोध-वैराग्य आदि भाव एक साथ ही मनमें जन्म लेने लगे... ऐसी विचित्र घटनाओं से भरा हुआ उनका वो 18 वर्ष पहले का इतिहास सुनकर मैंने उपर कहे हुए तमाम भाव अनुभव किये।

ये सब लिखते समय वापस वो भाव आयेंगे के नहीं, वो पता नही। और इसलिए पढने वाले वाचक भी इन सभी भावो की स्पर्शना करेंगे या नही? ये पता नहीं। फिर भी एक सत्य घटना सभी को बतानी उपयोगी लगी, इसलिए वर्णन कर रहा हुँ। पूरी घटना पद्मा बहन ने ही कही थी। इसलिए यहाँ शुरुआत भी उसी तरीके से करुंगा जाने की पद्मा बहन कह रहे है।

ता. 2.1999 ऑक्टूबर! ये तारीख मुझे डाक्टर ने डीलीवरी के लिए कही थी। परंतु इस तारीख को संतान की डीलीवरी नही हुई। इस के बाद सात दिन और बीत गये। ता. 8

अक्टूबर का वह दिन! मैं घबरा गयी थी कि '7-7 दिन उपर हो गये, फिर भी अब तक डीलीबरी नही हो रही है, तो क्या होगा?'

मैंने मम्मी को कहा कि ''हम एकबार चेकअप तो करा लें।'' और मैं और मम्मी शाहुकारपेट के हॉस्पिटल में सिर्फ चेकअप कराने के लिए ही गये थे। दोपहर के 11 बजे का समय था। हॉस्पिटल में चेकिंग कराया। और डॉक्टर ने कहा कि ''आप अभी एडमिट हो जाओ, आपकी डीलीवरी करवानी है।''

हम दोनो चकरा गये। कोई पुरुष साथ में नही था। घर में कोई बात भी नही कही थी। कपडे वगेरे भी कुछ भी लिए बिना ही आये थे। मन से भी हम तैयार नही थे।

''हम घर जाकर कपडे लेकर आते है, सभी को बात करके आते है।'' मैंने डॉक्टर से विनंती की।

''नही! आपको अभी एडमिट होना पडेगा। अगर आप घर गए और रस्ते में कुछ गडबड हुई, तो फिर मैं आपका केस हाथ में नही लूँगा।'' डॉक्टर की बात में चेतावनी थी या धमकी ये तो मुझे पता नही चला, परंतु हम डर गये।

मम्मी ने घर पर फोन करके सबको बताया और इस तरफ मुझे एडमिट करने में आया।

डॉक्टर ने प्रक्रिया की। बेटी का जन्म हुआ। नर्स तुरंत ही उसकी सफाई करने के लिए उसको लेकर चली गयी। डॉक्टर ने स्टीचींग की और फटाफट दूसरे काम के लिए चला गया। जल्दी जल्दी में उसने बहुत मजबूती से स्टीच कर लिया। इसलिए जिस प्रकार बहुत फीट कपडे पहनते है, तो पीडा होती है, उसी प्रकार

से स्टीच ज्यादा फीट होने से मुझे सख्त पीडा हो रही थी। उस समय मेरे पास कोई हाजिर नही था। न डॉक्टर, न नर्स, न आया...न कोई दूसरा स्वजन... स्वजनो को तो बुलाने भेजा था ना..

''नर्स... नर्स...''मैंने जोर से आवाज लगायी। पेट की पीडा बढ़ रही थी...

एक नर्स दौडकर आयी। मैंने उसे तीव्र पीडा की अनुभूति की शिकायत की। ''मुझे सख्त दर्द हो रहा है। ये स्टीचींग बहुत फीट है। डॉक्टर ने जल्दबाजी की है, वापस जल्दी उनको बुलाओ।''

मेरा साढे चार वर्ष का एक लडका था। नाम था उसका दीपक! उसकी डीलीवरी के समय मुझे ऐसी पीडा नही हुई थी। इसलिए मुझे शंका हुई कि *'कुछ गडबड तो नही हुई ना?'* इसलिए ही मैंने नर्स को वापस बुलाया। नर्स दौडती दौडती आयी।

''मुझे सख्त पीडा हो रही है। डॉक्टर को बुलाओ जल्दी।'' मैने शिकायत की, प्रार्थना की और नर्स भी गंभीरता समझकर डॉक्टर को बुलाकर ले आयी। डॉक्टर आये तो जरुर, परंतु उनको दूसरे भी बहुत काम होंगे, इसलिए वो जल्दी में थे।

उनको ख्याल आ गया कि जल्दी करने में उन्होंने टांके एकदम फीट ले लिये है। परंतु वो किसलिए अपनी भूल स्वीकार करें? अरे! वो डॉक्टर किसलिए?

दुनिया में कौन ऐसा सच्चा है, जो सामने चलकर अपनी भूल स्वीकार करे? 'अभी तो वो **'पकड'' में आयो बो चोर...**

चोरी करते पकड में न आये वो साहुकार'.... ऐसी हालत है। अर्थात् वो डॉक्टर भी इस प्रकार दोषपात्र नही था।

उन्होंने टांके तोडे और फिर से टांके लिये.... परंतु मेरा पापोदय और उनका जल्दी जल्दी करने का स्वभाव ..दोनो साथ हुए। अंत में टांके लेने के बाद उसका धागा काटना पडता है, परंतु जल्दी जल्दी में उन्होंने मेरी खून की नस ही काट डाली। काट डाली वो तो ठीक, परंतु इस बात का उनको पता भी नही लगा.... वो जल्दी में थे। इसलिए क्या हुआ है? फये देखे बिना ही डॉक्टर वहाँ से चले गए, मुझे अकेले छोडकर।

खून की नस कट जाने पर कितनी पीडा होती है, ये आप समझ सकते हो। मेरी पीडा असह्य थी, परंतु मैं तो बेड पर आडी पडी हुई थी। इसलिए मुझे ये पता नही चला कि *'धागे के साथ मेरी खून की नस भी कट गयी है, और उसमे से धडाधड खून बाहर आ रहा है।'*

मैंने सोचा कि **'इस बार डीलीबरी लेट हुई है, शायद इस कारण से मुझे पीडा हो रही है।'**

मन मजबूत करके पीडा सहन करती रही।

वही मुझे अनुभव हुआ कि मेरी पीठ के नीचे कुछ गरम गिला गिला स्पर्श हो रहा है।

मैने अपना हाथ वहाँ लगाया। पानी जैसा कुछ लगा.. और जैसे ही हाथ उपर किया.... आखों से देखा...तो मेरे मुख से चीख निकल गयी। पूरा हाथ खुन से लथपथ था।

''नर्स... डॉक्टर...'' मैंने वापस जोर से आवाज लगायी। पीडा के साथ भय भी मिल गया।

मौत का भय... 'बच्चो का क्या होगा?' उसका भय,

परिवार का भय.. मैं एकदम घबरा गयी। मुझे अंदाज आ गया कि *'डॉक्टर द्वारा कोई गंभीर भूल हो गयी है।''*

मेरे श्रावक, मेरे भाई अशोकजी-ज्ञानजी-प्रेमजी भी आ गए थे। डॉक्टर और नर्स दौडते दौडते आये। खून से लथपथ बेड देखकर ही डॉक्टर के होश उड गया। वो समझ गया कि वे खुद जेल में जा सकता है, नौकरी जा सकती है, बडे-बडे आरोप लग सकते है। परंतु वो होशियार निकला।

''देखिए ता. 2 को ही डीलीवरी होने वाली थी, परंतु वो नही हुई। आज 8 हो गयी। आप इनको बहुत लेट लेकर आए हो। आपने गंभीर भूल की है। ये खून इसलिए ही निकला है। मैंने इसलिए इनको जल्दी एडमिट किया। अगर ये घर जाने के लिए रूकते, तो इससे भी भयानक हालत होती।''

डॉक्टर ने सारी भूल हमारी ही बताई।

'' प्रयत्न करते है।'' जैसे कि वो हमारे उपर उपकार कर रहा हो वैसे बोला। मुझे तो गहराई से ऐसे लगने लगा कि 'जरुर कुछ गडबड है।' इसलिए मैंने इतनी पीडा में भी श्रावक को कहा, मुझे घर ले चलो।

''मुझे **O.T.** में जाने मत दो। आप समझो कुछ गडबड लगती है।''

परंतु मेरी बात कौन माने ? मुझे बचाने के लिए इन्होंने दृढ संकल्प किया था। '' पद्मा! सब अच्छा होगा, चिंता मत कर।''

और मुझे डाक्टर नर्स **O.T.** में लेकर गये।

दादाजी, पापाजी (ससुर), श्रावक , मैं, देवर-देवराणी, मेरा बेटा दीपक और देवराणी की एक संतान कुल 8 लोगों का

हमारा संयुक्त परिवार था। सभी का परस्पर स्नेह अव्वल कोटि का था। मैं और देवराणी सगी बहनो की तरह रहते थे। दादाजी और पापाजी का हमारे उपर वात्सल्य भरपूर था।

हाँ! हम मध्यम परिवार वाले थे। श्रावक ने उसी समय नौकरी छोडकर केमिकल की छोटी दुकान चालु की थी। देवर नौकरी ही कर रहे थे। पापाजी ने घर में बैठे गिरवी का छोटा काम शुरु किया था। महिने की कुल इन्कम 15-20 हजार के आस-पास की थी। आठ लोगों का परिवार 18 वर्ष पहले इतनी इन्कम में खाते-पीते तो सुखी था। परंतु, भाडे के छोटे से घर में रहते थे। इस परिवार के लिए ऐक्स्ट्रा खर्च करना भारी था।

O.T. में डॉक्टर ने दूसरी बार टांके तोडे और फिर वापस लिये। परंतु खून बहुत ज्यादा बह गया था। डॉक्टर को भी ध्यान आ गया कि अब ये केस बचाना शक्य नही है।

इस तरफ मेरा परिवार **O.T.** के बाहर चिंताग्रस्त खडा था। डॉक्टर ने बाहर जाकर कह दिया कि "हम कोशिश कर रहे है, परंतु कुछ भी नही कह सकते। शायद नही भी बचे।" मजबूत छाती वाले मेरे श्रावक और भाई दोनो अंदर से टूट गये। परंतु क्या करे?

डॉक्टर ने मेरे उपर वापस अटेक किया। अगर वो मेरा केस परिवार को सौंप दे, तो परिवार मुझे दूसरी बडी हॉस्पिटल में भी ले जा सकते और वहाँ दूसरे डॉक्टर देखे तो इस डॉक्टर की भूल पकड में आ जाती। इसलिए वो किसी भी कीमत पर मुझे जाने देना नही चाहता था।

'या तो यहीं ठीक हो जाउं या मैं यहीं मर जाउं..' बस

यही भावना उस डॉक्टर की थी।

'दूसरी हॉस्पिटल में जाने पर मैं बच सकती हुँ' ये शब्द होते हुए भी इसमे वो डॉक्टर फंस जाता। इसलिए उसने ये रास्ता ही बंध कर दिया।

मेरी वेदना अब तो असह्य थी। मैं हाथ-पैर पटकने लगी, परंतु नर्स-आया सबने मिलकर मेरे हाथ-पैर मजबुती से पकडकर रस्सी से बांध दिये और मेरे मुंह में कपडे को ठुंस दिया, ताकि मैं चीख न सकुं।

उसके पहले मैंने हाथ जोडकर डॉक्टर को विनंती की थी कि ''मुझे छोड दो.... मुझे जाने दो।'' परंतु जल्लादो के हाथो में फंसी बकरी के जैसी मेरी हालत थी। और अब तो हाथ-पैर बंद जाने से, मुँह बंद हो जाने से मैं एकदम असहाय बन गयी। बाहर खडे हुए परिवार को गंध भी कहाँ से आये कि मेरे उपर क्या बीत रही है।

चारो तरफ से मुझे डॉक्टरों और नर्सो ने घेर रखा था। मैं समझ सकती हुँ कि *'उनकी भावना मुझको मारने की नही थी। परंतु ये तो निश्चित था कि अपने आप को बचाने के लिए अगर मेरी जिंदगी खत्म हो जाये, तो भी उनको परवाह नहीं थी।'*

डॉक्टर ने चौथी बार मेहनत करने के लिए तीसरी बार के टांके तोडने के लिए चाकू हाथ में ली। मै बहुत डर गयी थी। असहाय-भयभीत-पीडाग्रस्त नरक कैसी होती है? इसकी छोटी सी कल्पना इस प्रसंग से निश्चित रूप से कर सकते है।

डॉक्टर ने विचार किया कि 'मुझे बेहोश कर दे, फिर देखेंगे।' इसलिए उसने अेनेस्थेसिया देनेवाले डॉक्टर को बुलाया

और मेरे सामने ही कहाँ कि ''इसे बेहोश कर दो।''

''नहीं! ये नही हा सकता। इनकी जो हालत है, उस हिसाब से अगर इनको बेहोश करेंगे, तो इनका जिन्दा रहना मुश्कील है'', उस डॉक्टर ने स्पष्ट मना कर दिया।

''तुम्हे जितने रूपये चाहिए उतने दूंगा। परंतु इसको बेहोश कर।'' डॉक्टर 1 ने उसको लालच दी।

मैं कानो से सुन रही थी। सब समझती थी। नजरो के सामने मौत थी। डॉक्टर-2 क्यां जवाब देंगा? अगर वो लालच में आ गया तो ?

आगे सोचने की मेरी शक्ति ही नही थी।

''आप करोड रूपये दो, तो भी ये पाप मैं नही करुंगा। आप निष्फल हुए हो, छोड दो इनको। सौंप दो इनके परिवार को। शायद इनका भाग्य अच्छा हो, तो दूसरी बडी हॉस्पिटल में ये बच जाये।'' डॉक्टर 2 बोले।

दोनो डॉक्टर एक समान वेश में थे। एक मुझे शैतान लगा एक भगवान लगा।

''परंतु, इसमें मै फंस जाउंगा'', डॉक्टर 1 ने लाचारी के साथ कहाँ।

''मतलब? मतलब कि एक निर्दोष को मार देना? इसके बदले अपनी भूल को स्वीकार कर लो।'' भगवान डॉक्टर ने कहा और उन्होंने उसी वक्त मेरे मुँह में ठुसा हुआ कपडा बाहर निकाला।

जैसे ही कपडा बाहर निकाला कि मैने जोर से बहुत जोर से चीख लगायी।

उसी समय मेरे श्रावक, और मेरा भाई **O.T.** का दरवाजा तोडकर अंदर आ गये। डॉक्टर को ध्यान आ गया कि ' अब सब कुछ ओपन होने की तैयारी में है।' हालाँकि उन्होंने क्या भूल की है, ये बात परिवार को पता नही थी। मुझे भी एकदम स्पष्ट तो कुछ अंदाज न ही था। अगर मे मर जाउं तो डॉक्टर बच जाये।

श्रावक और भाई मेरे पास दौडकर आये। मेरी हाल देखकर वो स्तब्ध रह गए।

''मुझे इस नरक से निकालो, मुझे घर लेके जाओ। मैं अब नही बचने वाली, मुझे घर में मरना है...'' जोरदार आँसुओ के साथ हाथ जोडकर मैंने श्रावक से विनंती की और धीरे-धीरे मेरी आँखे बंद हो गयी। बेहोश करने के इंजेक्शन की जरुरत ही नही पडी। पीडा की पराकाष्ठा ने ही मुझे बेहोश कर दिया।

'अब क्या करना?' परिवार वाले विचार में पड गये। मेरी बचने की आशा बहुत कम ही थी। डॉक्टरोने तो वैसे भी परिवार वालो को डराने का ही काम किया था कि *'ये नही बचेंगी।'* वो चाहते ही नही थे कि मुझे दूसरे हॉस्पिटल में ले जाया जाए।

''हम इसे बडे **Apollo** हॉस्पिटल में लेकर जाते है।'' मेरे श्रावक ने कहा।

हालाँकि उस समय में बेहोश ही थी, परंतु 3 महिने के बाद मुझे जो -जो बाते जानने को मिली वो यहाँ बता रही हुँ।

''देखिए, एक तो इनके बचने की उमीद नही है। दूसरे बडे हास्पिटल के खर्चे को पूरा कर सकें, इतनी अपनी शक्ति नही है।

बिल्कुल ही नही है। देनदार बन जायेंगे। अरे! अगर इनके बचने की कोई उमीद भी होती तो देनदार बनकर भी इनको बचाते। इसलिए अब वास्तविक परिस्थिति को स्वीकार लो। ये भगवान के घर....'' परिवार को ये पसंद तो नही ही था। सभी को मेरे प्रति लगाव था। परंतु वे हकीकत को आंखो के सामने रखकर चलने वाले थे।

वो गलत नही थे। मेरे दुश्मन नही थे, इसीलिए ही उन्होंने श्रावक को समझाने का प्रयत्न किया।

''नहीं....'', श्रावक बोले, ''मैं मेहनत करुंगा। मुझे मेरे अरिहंत परमात्मा और मेरे गुरु पर अगाध विश्वास है। वो मेरी सहायता करेंगे। मै अंत तक प्रयत्न करूंगा। '' भयंकर मक्कमता के साथ श्रावक ने अब मेरा केस हाथ में लिया। उनकी दृढता को देखकर फिर पूरा परिवार भी दृढ बन गया।

दूसरी हॉस्पिटल मे ले जाने के लिए ऐम्बुलेंस की जरुरत पडी, परंतु मेरा दुर्भाग्य कि इस हास्पिटल में से तो मुझे ऐंबुलेंस नही ही मिली। और हमने दूसरी बहुत सी हॉस्पिटल में तलाश की। मेरा केस बताया, विंनती की, परंतु कोई न कोई कारण से एक भी जगह से एंबुलेंस नहीं मिली।

अचानक प्रेम भैया को फेमेली डॉक्टर याद आये।

रायपुरम के भगवान समान डॉ-हरिलाल को उन्होंने फोन किया। रुदनपूर्ण आवाज के साथ मेरी बात बताई। बचा लेने की विनंती की।

''आप सब मूर्ख हो? पद्मा की ऐसी हालत है और मुझे सबसे अंत में याद किया? अभी के अभी एम्बुलेंस भिजवाता

हुँ...'' डॉ हरिलाल ने फोन पर जवाब दिया, और थोडी ही देर में एम्बुलेंस आ गयी।

आखिर मेरा उस नरक में से छुटकारा हुआ। हॉस्पिटल से बाहर निकली, परंतु मौत तो सिर पे मंडरा ही रही थी।

''इस केस को बचाना शक्य नही है। सिर्फ 5 एम.एल. ही खून बचा है। आप इनको घर लेकर जाओ। भगवान के भरोसे छोड दो।'' **Apollo** के लेडी डॉक्टर ने मेरा निरीक्षण करने के बाद गंभीरता के साथ अपना अभिप्राय कहा।

श्रावक अब अंदर से टूट गये। आंखो के सामने अंधेरा छा गया। जैसे कि वो एकदम निराधार बन गये हो।

मेरा बेटा दीपक ससुराल में उसकी दादी के पास था। अभी ही जन्मी बेटी मेरे पियर में नानी के पास थी। उन दोनो की माँ मैं हास्पिटल में जीवन-मरण के बीच झूल रही थी। हॉस्पिटल में से जब मुझे बाहर ले जाने में आया, तब ही मेरी मम्मी मेरी बेटी को लेकर घर चली गयी।

बिचारी बेटी के भाग्य में माँ का दूध भी नही था। उसके मुख का दर्शन भी नही था। और मुझे भी अब तक ठीक से पता नही था कि ''*मुझे संतान बेटा हुआ है या बेटी?*' क्योकि उसके जन्म लेते ही नर्स उसको सफाई के लिए ले गयी और उसके तुरंत बाद ही मेरी जिन्दगी के साथ कुदरत ने नये नये खेल खेलने चालु कर लिये।

''डॉक्टर साहेब! एकबार कोशिश करके देखिए, ये नहीं

बचेगी तो इसके दोनों बच्चे बिना मौत के मर जाएंगे।'' जैसे भगवान को विनंती करते हो वैसे श्रावक ने डॉ. से विनंती की। वो फूट-फूट कर रोने लगे।

''परंतु खर्चा.....''

''इसकी चिंता मत करो, इसको बचाने के लिए मैं कही से भी पैसा लाउंगा।''

''परंतु बचने की शक्यता कम है...''

''फिर भी कोशिश तो कीजिए.....''

आखिर डॉक्टर ने मेरे शरीर के टाँके चौथी बार तोडे। अंदर की परिस्थिति देखकर वो समझ गए। बाहर आकर बोले।

''वहां के डॉक्टर ने इनके शरीर के साथ भयानक खेल खेला है। इनकी खून की नस ही काट डाली है। आप उसपर कोर्ट में **Case** करो। उसको जेल भेजो। मैं आपको लिखकर देती हुँ, वो हारेगा ही।'' डॉ ने हमारे प्रति लगाव से और दूसरे डॉक्टर के प्रति गुस्से से कहा।

''डॉक्टर पहली बात तो यह है कि अभी पद्मा को बचाना ही हमारा लक्ष्य है। कोर्ट कचहरी में हम थक जाएंगे। दोनो तरफ दौड़ नहीं सकेंगे।

इसलिए हमे माफ करो। केस करने की हमारी अभी तो इच्छा नही है। फिर भी इस बारे में बादमें विचार करेंगे। अभी तो पद्मा को बचाने का प्रयत्न करना है।'' श्रावक ने स्पष्ट कह दिया।

''ठीक है, परंतु इसके लिए इनको खून की बोतले चढानी पडेगी। शरीर में खून ही नहीं और इसके बिना ये जी नहीं सकते

और इनका ब्लड ग्रुप भी सुलभ नही। मुझे 20 बोतले चढानी है। टी. वी. वगेरे में इसके लिए **Add** दे देती हुँ।'' डॉक्टर ने सब बात बता दी और फिर एक कागज निकाला।

''इसके उपर साईन करनी पडेगी'', मेरे श्रावक को डॉक्टर ने कहा।

''किस लिए?'' श्रावक ने पूछा।

''ईलाज के बीच अगर पेशन्ट की मृत्यु हो जाये, तो उसकी संपूर्ण जिम्मेदारी आपकी होगी। आपकी सहमति से ही हम ये इलाज कर रहे है। ये दर्शाने के लिए ही पेपर पर सही लेने में आती है।

इसमे कुछ गलत नही था, परंतु मेरी मौत की सहमति जैसे कि दे रहे हो, ऐसा उनको महसूस हुआ। काँपते हाथो, टपकटी आंखो और धडकते तडपते हृदय से उन्होंने साईन कर दी।

मन ही मन भगवान से प्रार्थना कि *'अरिहंत लाज रखना मेरी। दो बच्चे अनाथ न बन जाये, ये आप देखना।'*

I.C.U में मुझे खून की बोतले चढाने में आयी.... कुल 20 !

अभी तो सिर्फ पाव-आधा घंटा हुआ होगा और खून निकलने लगा। संपूर्ण बिस्तर खून से लथपथ हो गया। Impossible शब्द डॉक्टर के मन में उभर आया।

परिवार को कह दिया, ''**Sorry**'' अशक्य है। आप पेशंट को ले जाईए, शरीर में खून टिकेगा, तो ही ये बच पाऐंगी। ये तो आधे घंटे मे ही सारा खून निकल गया, आप आशा छोड दो। फालतू पैसा मत बिगाडो।''

डॉक्टर अच्छे थे, सचमुच बहुत अच्छे थे।

वैसे देखा जाए तो कौन खराब है? कोई भी नहीं। पहले डाक्टर भी मुझे मारना तो नही चाहते थे। प्रमाद से उनसे भूल हो गयी और अपने-आप को बचाने के लिए कुछ भी करना.... ऐसा स्वार्थ तो प्राय: सभी में रहता ही है।

और मेरे भी ऐसे ही कोई पापकर्म होंगे ना जिस वजह से ये भूल उनके द्वारा मेरे उपर ही हुई। उस डॉक्टर ने ऐसे टांके लेने-तोडने के काम हजारो बार किये होंगे। परंतु किसी दूसरे को उनके निमित्त से तकलीफ नही हुई और मुझे ही तकलीफ हुई.... ऐसा क्यों? यही कि मेरे पूर्व भव के पापकर्म ही उदय में आये। बेचारे मेरी खून की नस कांटने वाले वो डॉक्टर तो निमित्त ही समझे-गिने।

मेरे श्रावक ने वापस हाथ जोडे, "डॉक्टर! वापस एक बार प्रयत्न करके देखिए। आपको अपयश नहीं मिलेगा। आप तो हमारे लिए भगवान जैसे ही हो।"

डॉक्टर ने एकबार फिर साहस करने का निर्णय लिया।

वापस सभी जगह खून के लिए समाचार भेजे। वापस खून की 20 बोतले.... 3 घंटे तक खून टीका.... थोडी आशा बंधी, परंतु तुरंत ही वो आशा टूटी। वापस 20 बोतल खून निकल गया। वापस हताशा।

खून की नदीयों से लथपथ बिस्तर...

डॉक्टर ने श्वास छोडा "**Not Possible**" शब्द उनके मुख से निकल पडा।

"डॉक्टर पहली बार आधा घंटा खून टीका, दूसरी बार तीन घंटे टीका, हो सकता है तीसरी बार वो ज्यादा टीके, हमेशा

के लिए टीके, शरीर खून को स्वीकारने लगे, तो ये बच भी जाए।

उसके बाद में अक्षर भी नहीं बोलूंगा, पत्नी को लेकर चला जाउंगा। इसकी अभी जन्मी बेटी को गोदी में लेकर उसकी नानी घर में बैठी है। सतत भगवान का जाप कर रही है। एक मिनिट के लिए भी बेटी को गोदी के नीचे नही उतारा। नानी राह देख रही है कि पद्मा जिंदा घर लौटेंगी। प्लिस डॉक्टर!'' श्रावक ने इस प्रकार हाथ जोडकर विंनती शायद पहली बार ही अपनी जिंदगी में की होगी।

परिस्थिति इन्सान को परवश बना देती है। पत्थर को पिघला देती है।

आखिर तीसरी बार 20 बोतल चढाने में आयी । इस बार उन्होंने खून की बोतले चढाने के बाद चारो तरफ से उसके उपर वजन रखा।

डॉक्टर ने कहा, ''अगर 24 घंटे शरीर में खून टीक जाता है, तो ही समझना कि इसकी जिंदगी बच जाएगी।''

श्रावक और भाई सतत प्रार्थना कर रहे थे और चमत्कार का सर्जन हुआ।

इस बार शरीर ने खून को स्वीकार कर लिया। खून बाहर नही निकला।

''भगवान का आभार मानो,'' डॉक्टर ने हर्ष के साथ मेरे श्रावक को कहा।

''आपकी पत्नी बच गई है। परंतु अभी भी बहुत ध्यान रखना पडेगा। लेकिन खतरे से बाहर है। अभी तो बेहोश है, कब होश आयेगा ये पता नही।''

एक-दो-तीन, तेरह दिन बीत गये।

मैं बेहोश....

104/105 डिग्री बुखार सतत रहता था। मुझे **I.C.U** में ए.सी. के बीच भी बर्फ के उपर रखने में आया। मेरा पूरा शरीर मशीनो और ट्युबो से घिरा हुआ था।

जब मैं मौत के मुंह में थी, तब मेरे पापा ने मेरी मम्मी को कहा था कि "इस बालिका को मुझे सौंपकर एक बार हॉस्पिटल जाकर अपनी बेटी के दर्शन करके आ जा। मरणशय्या पर है। फिर तु अपनी बेटी को जिंदा नही देख पाएँगी।"

मेरे पापा के मुंह से ऐसे कठोर शब्दो को सुनकर भी मेरी मम्मी डिगी नही।

"यह बिटिया भाग्यशाली है, ये अपनी मम्मी को बचाएगी। मेरी बेटी वापस घर आएगी ही। बेटी को देखने - खिलाने.... इसको छोड कर मुझे कही भी नहीं जाना है। ये मेरी गोदी में ही रहेगी, जब तक इसकी मम्मी खतरे से बाहर नही आती..." और अडिग श्रद्धा के साथ मेरी मम्मी तीन दिन तक मेरी लाडली को गोदी में लेकर बैठी रही।

तेरह दिन के बाद जब मैं होश में आयी, तब मेरे आस-पास कोई भी नही था। मैं डर गयी। मुझे तो ये भी पता नही था कि, '13-13 *दिन बीत गये है।*' मैं यही समझ रही थी कि '*अभी ही मेरे संतान का जन्म हुआ है। मैं बेहोश हुई और अब होश में आयी हुँ।*'

तभी एक नर्स मुझे होश में देखकर तुरंत ही बाहर गयी। और मेरे श्रावक को बुलाकर लायी।

मुझे होश में देखकर-मेरी आँखे खुली देखकर, श्रावक

तो जोरदार आँसुओं से रोने लगे। हाँ! ये खुशी के आँसु थे।

मुझे समझ नही आया कि 'वो क्युं रो रहे है?'

मैंने महामुश्कील से पूछा ''मुझे बच्चा होने वाला था, तो उसका क्या हुआ? वो कहां है? पास में झूला भी नही है...वो लडका है या लडकी?''

बडी मुश्कील से रूंधे हुए गले को स्वच्छ-स्वस्थ करके श्रावक बोले, ''तुझे बेबी हुई है। तेरी मम्मी और दीदी अभी उसको लेकर आ रहे है।''

मुझे कुछ भी समझ में नही आया। 'बेटी तो मेरे पास ही होगी ना, इसमें उसको लाने की क्या जरुरत?' परंतु यह विचार ज्यादा समय नही रहा, क्योंकि मेरे आनंद की कोई सीमा नहीं थी।

मैंने श्रावक से कहा था, ''मुझे इस बार बेटी ही चाहिए'', और मेरी इच्छा भगवान ने पूरी की थी।

''देखा ना मेरी इच्छा अनुसार बेटी ही जन्मी ना?'' मैंने कहा...

''हाँ!'' वो इतना ही बोल सके....

वो यह ना बोल सके कि 'पद्मा! इस बेटी के लिए-तुझे बचाने के लिए कितना भयंकर भोग देना पडा है।'

मेरी खुशी देखकर वो भी एकदम भाव विभोर हो गए थे।

तब तक तो मेरी मम्मी और दीदी मेरी लाडली को लेकर आ पहुंचे। बराबर तेरह दिन बाद मैंने पहली बार उसको देखा। जाने के मेरे लिए तो आकाश से धरती पर परी का अवतार हुआ।

उसे मेरे हाथ में लेने, गोद में लेने, खिलाने, वात्सल्य

बरसाने के लिए मैं बैठने के लिए उठी.. पर मेरे शरीर ने साथ नही दिया।

सिर वापस गिरा। असह्य वेदना हुई। तभी मुझे समझ में आया कि '*मैं सामान्य परिस्थिति में नहीं हुँ।*' मशीनों के उपर, बर्फ के उपर, मेरी जिंदगी रही थी।

मैंने सामने देखा.....

सब मौन थे, परंतु सबकी आँखे बोल रही थी। सबकी आँखो में आँसु थे। मुझे होश आ गया उसकी खुशी थी और मेरी तीव्र तडप मेरी बेटी के लिए होते हुए भी मैं उसे स्पर्श भी नहीं कर सकी उस का खेद था .....

मेरी आँखो में अंधेरा छाने लगा और मैं वापस बेहोश हो गई।

डॉक्टर ने कह दिया कि ''ये इसी प्रकार होश और बेहोश होती रहेगी। संपूर्ण होश में आने में अभी वक्त लगेगा। परंतु चिंता की कोई बात नहीं है।''

लगभग 20 दिन और बीत जाने के बाद मैं संपूर्ण होश में आयी।

मुझे **I.C.U** में बिल्कुल सेट नही हो रहा था। एक तो ए.सी. और दूसरी ओर बर्फ रखा गया था।

मैंने नर्स से बहुत विनंती की! डॉक्टर से बहुत विंनती की! आखिर उन्होंने भी दूसरी कोई तकलिफ न होने से मुझे सामान्य रूम में **Shift** कर दिया। वहां मुझे शाता का अनुभव होता था।

अब बेटी को रोज मेरे पास लाते। मैं उसे दूध पिलाती और फिर मम्मी वापस उसे घर ले जाती। मैंने बहुत मिन्नत की, परंतु मेरी कौन सुने? और उनके पास ठोस कारण भी था कि '**बेबी**

को इन्फेक्शन लग जाएगा।'

इसलिए सभी ने मुझे बहुत शांति से समझाया... पटाया... मनाया... और मैंने स्वीकार कर लिया।

जब बेटी को हॉस्पिटल लाते, तब मैं इतने ज्यादा आनंद में आ जाती कि बात मत पूछीए, और जब उसे वापस ले जाते, तब ऐसा दुःख मुझे होता कि जैसे मेरे प्राण लेकर जा रहे हो।

अभी तक मुझे सत्य तो पता ही नही था। थोडा बहुत जान चूकि थी, परंतु इन दिनों में मैंने सबका अपार स्नेह देखा।

वहाँ काम करने वाली नर्सें अपने-अपने भगवान को मेरे लिए प्रार्थना करती।

झाडु-पोछा करने वाली कामवालीआँ, वोर्डबॉय आदि भी अपने अपने भगवान को प्रार्थना करते। हॉस्पिटल के कई डॉक्टर बिना काम के भी मेरे रूम में आ जाते। मेरे सामने मधुर मुस्कान बरसा कर जाते। ''आप भाग्यशाली हो, आप बच गये,'' विगेरे-विगेरे आश्वासन देने वाले शब्द बोलकर जाते।

श्रावक, भाई, मम्मी, दादी... ये सभी तो जैसे अपना संसार भूलकर मेरे पीछे लगे हुए थे।

ससुराल वालो ने भी मेरी संभाल लेने में कोई कमी नही रखी थी।

मनुष्यों के जीवन में जब दुःख आते है, आपत्तियाँ आती है, मुश्केलें आती है... तभी उसे अपना कौन? पराया कौन? उसका सच्चा अनुभव हो जाता है।

वैसे परमार्थ से तो सभी पराये ही है, फिर भी कोई भी प्रकार के स्वार्थ के बिना दूसरों के भले के लिए अपना भोग देने वाले तो व्यवहार से अपने स्वजनों के समान ही पहचाने जाते है

और ऐसे समय में ऐसे स्वजनों की भावनाओं , उनकी नि:स्वार्थ प्रवृतियाँ अपने दु:खो के दावानल के बीच अमृतवर्ष का काम कर जाती है।

कभी तो ऐसा लगता है कि *'ऐसे दु:ख आए तो अच्छा ही हुआ कि जिससे ऐसी अमृतवर्षा में स्नान करने को मिला ।'*

अरे! दूसरों के प्रति गलतफहमी तोडने का काम भी ऐसे दु:खों के समय में ही होता है। संबंधो को सुधारने का काम भी तभी ही होता है। दुनिया की ऐसी विचित्रता देखकर आश्चर्य होता है, परंतु यह एकदम ठोस सत्य है।

मुझे नर्सो में, आयाओं में, डॉक्टरों में, स्वजनों में भगवान के दर्शन हुए और इसलिए आज यह भी कहती हुँ कि एलोपथी सायंस को, इस लाईन में रहने वालो को, एकांत रूप से दुष्ट मानने की भूल मत करना।

आज भी ऐसे हजारों डॉक्टर होंगे ही जिनमें मानवता की ज्योत झलकती है। परिस्थिति के कारण वे डॉक्टर कभी शायद राक्षस बने हुए दिख जाए, परंतु इतने मात्र से संपूर्ण मेडिकल लाईन को हम खराब नहीं मान सकते।

आज भी अहमदाबाद में सुधीर भाई शाह से लगाकर हजारों डॉक्टर साधु-साध्वी की सेवा से लगाकर सभी प्रकार के अपूर्व कोटी का सेवाकार्य करते ही है।

लगभग एकाद महिने के बाद मुझे डिसचार्ज करने में आया। वैसे तो अभी वहीं रुकना जरुरी था। परंतु परिवार को परेशानी होती थी और खर्चे भी हमारी पहुंच से बाहर थे। मुझे भी शांति मिलती नहीं थी।

आखिर घर यानी घर और हॉस्पिटल यानी हॉस्पिटल!

हाँ! जब मैं थोडी ठीक हो गई, मशीनो को हटा दिया, थोडी ही नलिया (ट्युब) लगी हुई थी, तब मुझे वॉकिंग कराते, संडास-बाथरूम के लिए लेकर जाते।

बाथरूम में पहली बार मेरी नजर मेरे चेहरे पर पडी और मेरे मुख से चीख निकल गयी। मैं अपने आप को ही पहचान नहीं पायी। पूरा चेहरा बदल गया था। विचित्र हो गया था।

मैं आघात से फर्श के उपर गिर पडी। आवाज सुनकर नर्स दौडकर आयी। बडी मुश्कील से मुझे बाहर निकाला।

वे जानते ही थे कि एक के बाद एक आघात मुझे पचाने थे। इसलिए एक साथ सभी आघात न लगे, परंतु धीरे धीरे मुझे एक एक सच्चाई का पता चले इसका उन्होंने ध्यान रखा था। तो ही मैं उसे स्वीकारती जाउंगी ना?

बस, उसके बाद तो वो सोने के दिन का उदय हुआ। मुझे डीस्चार्ज करने में आया। मैं बहुत खुश थी, परिवार खुश था, मेरी गुडियां तो खुश ही होगी ना?

परंतु मेरी विदाई के समय नर्स की आंखो में आंसु थे। कचरा पोछा करने वाली बाई भी रो रही थी। डॉक्टर के मुंह पर भी लगाव का झरना बह रहा था... शब्दो के बदले आँसु बोल रहे थे। मुख के हावभाव ही बात कर रहे थे।

मुझे कडक सुचनाएं देने में आयी थी, क्योकि अगर में बराबर सार-संभाल न रखु, तो वापस बडी घटना घटने की संभावना थी। मुझे निश्चित किए हुए दिन वहां चेकअप के लिए जाना एकदम आवश्यक था।

हॉस्पिटल से अपने पियर आयी। मुझे लगा था कि 'अब

तो अशाता दूर होगी', परंतु मेरी सोच गलत थी।

कर्मसत्ता के सामने किसी का कहाँ चलता है और विशेष ज्ञानी के सिवाय कौन ये भविष्य के कर्मविपाको को जान सकता है? इसलिए तो बिचारे अज्ञानी जीव सुख की राह देखते बैठे रहते है, परंतु आता है दु:ख, और इसलिए डबल दु:खी होते है।

एक तो दु: ख का दु:ख और दूसरा सुख की अपेक्षा टूट जाने से लगने वाले आघात का दु:ख!

अगर दु:ख की ही तैयारी रखकर बैठे हो और दु:ख आये, तो मात्र दु:ख का ही दु:ख अनुभव होता है। सुख की अपेक्षा टूटने के आघात का दु:ख अनुभव ही नही करना पडता।

परंतु, सुख की अपेक्षा छूटती ही नहीं।

शास्त्रकारों ने इसलिए ही तो **'अविक्खा अणाणंदे'** इस सूत्र में अपेक्षा को ही दु:ख कहा है।

घर पहुंचने के बाद अभी तीन चार दिन ही हुए थे कि मेरे शरीर में अराई उत्पन्न होने लगी। अराई यानि लाल-लाल कलर के चांटे! भयंकर पीडा दायक थे। इसको लोग माताजी बोलते है।

शरीर के उपर के भाग में आगे और पीछे दोनों तरफ जैसे कि मेरे शरीर के उपर किसी ने सुलगते अंगारे रखे हो ऐसी पीडा होती। मेरे लिए सीधा या उल्टा सोना अशक्य बन गया। कोई भी एक बाजु पर मुझे सोना पडता था। करवटें बदलते समय जब अराई वाला भाग दबता, तब तो चीख निकल जाती।

ऐसी परिस्थिति में 3 महिने मैंने निकाले। उसके बाद धीरे धीरे ठीक तो होने लगा, परंतु आज 18 साल के बाद भी गर्मी के

दिनों में शरीर में बेहद गर्मी उत्पन्न होती है।

बेटी के जन्म के बाद कुल 6 महिने तक बिस्तर में रही। बहुत से लोगों ने कहा कि *'ये तो पनोती है। ये जन्मी और इसकी मम्मी को कितना सारा दुःख आया...'*, परंतु जब इसकी जन्म पत्रिका ज्योतिषी को बताई, तब उसने एकदम स्पष्ट शब्दो में कह दिया कि "बेटी महाभाग्यशाली है। इसके आने से आपके घर में बहुत उन्नति होगी। ये इसकी माँ का सहारा बनेगी।"

और साहेबजी ये बात अक्षरश: सच साबित हुई।

आज आरती के दादा का धंधा भी बढा है। इसके पापा और चाचा का धंधा भी विकसीत हुआ है। यहां से 70 किलो दूर बने 72 जिनालय में एक देहरी का लाभ हमने भी लिया है।

अभी आपकी प्रेरणा से आरती ने गिरनार की नव्वाणुं की। हम भी अंत में वहाँ गये। इसकी इच्छा थी नेमिनाथ दादा के प्रक्षाल का चढावा लेने की। इसके पापा एक लाख की तैयारी के साथ बोले।

परंतु चढावा आगे बढा.... आखिर 2 लाख तक हम बोले, नहीं मिला। आखिर छोडना पडा।

ये सब कहने का आशय इतना ही है कि '18 वर्ष पहले 9-10 लोगों के परिवार के बीच छोटे से घर में 15 से 20 हजार की कुल इन्कम में जीने वाला हमारा पूरा परिवार, इस बेटी के जन्म के बाद विकासयात्रा में बढते-बढते आज यहां तक तो पहुंच गया है की धर्मक्षेत्र में करोडो नहि, तो लाखो रूपए तो खर्च ही सकते है।'

इसको दुर्भागी कहने वाले गलत साबित हुए। ये तो सौभाग्यवंती

साबित हुई।

और साहेबजी! दूसरी भी एक बात बता दूँ। वैसे तो मैं इसकी माँ हुँ, परंतु अभी ये मेरी माँ के तरह काम कर रही है। इसकी उम्र सिर्फ 18 है, परंतु 81 वर्ष की परिपक्व व्यक्ति में जो समझदारी होती है वो मैने इसमें देखी है।

मुझे किसी कारण वश गुस्सा आया हो तो उसको शांत करने का काम ये ही करती है।

मुझे किसी कारण वश आघात लगा हो तो मुझे हसाने का काम, प्रसन्न करने का काम भी ये ही करती है। ये है तो मैं हुँ, ये नहीं तो मैं भी नहीं।

इसके पापा विगेरे सभी कहते है कि, ''आरती को ठपका भी देना नही।'' इस प्रकार घर में वो सबकी लाडली है-अति लाडली है।

अब बोलिए साहेब! आपको लगता है कि इसके पापा इसको दीक्षा के लिए अनुमति देंगे?

हाँ! हमे धर्म करने के लिए कभी भी रोक टोक नही करते। पहले तो खुद भी धर्म से जुडे हुए थे। साधुओं के पास बहुत आते जाते थे। परंतु बारबार पैसे की मांग आदि के कारण इनका मन खराब हो गया।

इसलिए अभी वो लगभग आते ही नहीं है। मुझे व्याख्यान के लिए छोडने आते है, परंतु अंदर नहीं आते है।''

पद्मा बहन ने अपनी दास्तान विस्तार से कह सुनाई।

आरती बहन भी यह सब सुनते सुनते रो ही रहे थे। उनको लगा होगा कि *'मुझको बचाने के लिए मम्मी-पापा को कितना सब सहन करना पडा।'* वो आगे बोले....

''इन मुश्कील से भरे महिनों के दौरान कितने ही लोगों ने अलग-अलग प्रकार की सलाह हमको दी।

शिरडी के साईबाबा को मानो....

तिरुपति बालाजी की मानता रखो, मुंडन कराओ....

जितने पत्थर उतने भगवान, उतनी अंधश्रद्धा.....

अपने जैन भी जीवन में दु:ख आते है, तब ऐसी अंधश्रद्धा के शिकार बनते ही है और फिर पूरी जिंदगी वो अंधश्रद्धा दूर होती ही नहीं। परंतु मेरे श्रावक की श्रद्धा अडिग थी, जिनशासन के प्रति की।

हमने इन भयंकर परिस्थितिओं में भी कभ अरिहंत परमात्मा के सिवाय किसी को भी याद किया नहीं।

हम खरतरगच्छ के है, इसलिए दादागुरुदेव का स्मरण करते है। उन दिनों में तो श्रावक के मुख में सतत देव-गुरु का स्मरण रहता था। हमने कभी भी दूसरे देवी-देवता को नही माना! अरिहंत परमात्मा ने हमारी रक्षा की है।'' पद्मा बहन ने अपनी बात पूरी की।

दीक्षा की प्रेरणा से शुरु हुई इस आत्मकथा को सुनते-सुनते कितने सारे तत्त्व मस्तिष्क में उभर आये, अंकित हुये, लिखे गये।

* **कर्मों के विपाक अति भयंकर हो सकते है...** उसे अनुभवने की तैयारी रखनी ही ।
* **दु:ख देनेवालो को मात्र निमित्त समझना...** अपने कर्मो का ही दोष समझना।

* **दुःखो के समय डगमग नही होना,** देव-गुरु-धर्म के प्रति श्रद्धा नही गवाना।

आरतीबहन को तो मैंने प्रेरणा की है कि, ''अटकना नही.... आगे बढ़ना। स्वजनों का प्रेम आपको अटकाएँगा, परंतु आपको इसमें अटकना नही है। ऐसा भयंकर प्रसंग बनने के बाद तो दीक्षा के लिए और भी मजबूत बनना चाहिए।

क्या मिलेगा इस संसार में? ऐसे भयंकर कर्मो को तोडने के लिए पुरुषार्थ इस भव में ही क्यों नही कर लेना?''

उनके पापा मुझे मिले नही, परंतु उनको भी यह हितशिक्षा देनी है कि ''बेटी का सच्चा हित देखना। आपको यह बहुत मुश्कील से मिली है, सिर्फ उस कारण से उसके उत्तममार्ग में आप विघ्नरुप मत बनना।

वैसे ससुराल तो भेजना ही पड़ेगा ना? तो उससे ज्यादा अच्छा यह है कि भगवान के साथ ही उसकी शादी करवा दो। भगवान जैसे व्यक्ति आपके जमाई बनेंगे, भगवान के माता-पिता आपके वेवाई बनेंगे.... फिर तो आपको बेटी की चिंता ही क्या करनी?

18 वर्ष के आरती बहन भविष्य में दीक्षा ले सकेंगे या नही? **ये पता नही।**

ऐसा सख्त पुरुषार्थ कर सकेंगे या नही? **पता नही।**

परंतु एकबार इनको ये भाव आया है। इसका मतलब बीज तो गिर ही गया है।

मैंने तो पद्माबहन से भी पूछा कि, ''आपकी भावना नही है, चारित्र की? बेटी से ज्यादा संसार की असारता तो आपने देखी है ना?''

''हाँ! भावना है।'' पद्माबहन ने सच्चे भाव से कहा, '' परंतु कब मेरे जीवन में उदय आयेगा ये पता नही।''

उन्होंने मुझे कहा कि ''साहेबजी! आप सभी को कहना कि आप सब दूसरा कोई भी धर्म कम-ज्यादा करोंगे तो चलेगा... परंतु *व्याख्यान श्रवण* तो अवश्य करना। आपके जीवन में परिवर्तन का एक मात्र कारण ये बनकर रहेगा।''

उनकी बात अपेक्षा से गलत नही है।

1. सुबह 7 से 8 बजे तक स्नात्र-पूजादि भक्ति करनेवाले और फिर व्याख्यान के समय घर जाकर नाश्ता आदि करनेवाले श्रावक विवेकी कहे जा सकते है भला?

उनको भगवान प्रिय है? या भगवान की आज्ञा?

2. व्याख्यान के समय ही पूजा-स्नान आदि करने वाले श्रावक विवेकी कहे जा सकते है भला?

3. व्याख्यान के समय ही वरघोड़ा, सिद्धचक्र पूजन आदि रखने वाले श्रावक विवेकी कहे जा सकजे है भला?

4. व्याख्यान गौण करके रविवार आदि के दिनों में नजदीक के तीर्थों में यात्रा (!) करने के लिए जानेवाले श्रावक विवेकी कहे जा सकते है भला?

5. व्याख्यान के समय मंदिर में पूजा पढाने वाले महिला-मंडल विवेकी कहे जा सकते है भला?

कदाचिद् उनके मुग्धकक्षा के भावों का सामान्य फल भले ही उनको मिले, परंतु विवेक न होने के कारण वे विशिष्ट कोटि के फल को गँवा ही देते है।

किसी को बुरा लगे तो क्षमा माँगने पूर्वक कह रहा हुँ कि, स्थापना निक्षेप वंदनीय-पूजनीय-आदरणीय अवश्य है ही, परंतु

भावसाधु के रुप में बिराजमान मुनि भगवंतो और उनके मुँख से निकलती प्रभुवचन रुपी देशना की उपेक्षा करनी तो अनुचित है ही ना?

मंदिर में बिराजमान स्थापना अरिहंत को वंदन करने जाने वाले हजारो की संख्या में है, जब कि उपाश्रय में बिराजमान भाव साधु-साध्वी को वंदन करने जानेवाले सेकड़ो में भी नही..... ऐसा क्यों?

जैन संघ को बहुत-बहुत सोचने की और बदलने की जरुरत है!

स्थानकवासी और तेरापंथी समाज ने मूर्ति की उपेक्षा करके अपार भक्तियोग गवायाँ है, तो मूर्तिपूजको ने जिनवचनों की उपेक्षा करके ज्ञानयोग तो नही गवायाँ ना? इसका तटस्थ भाव से विचार करना जरुरी है।

अंतिम दो वाक्यों से स्थानकवासी, तेरापंथी या मूर्तिपूजक किसी को भी दुःख लगने की संभावना है... परंतु मेरे अंदर की सच्ची भावना को समझोंगे, तो आपको दुःख नही होगा, सच्चाई का स्पर्श होंगा....

॥ नमोस्तु तस्मै जिनशासनाय ॥

श्रुत messenger

प.पू.गुरुदेव गिरिविहार प्रेरक
श्री हेमप्रभसूरीजी म.सा. के शिष्य
प.पू.आचार्य
श्री उदयप्रभसूरीश्वरजी म.सा.
हमारे परिवार के उपकारी

Rajendra Guru Developers (PVT) Ltd.

कथा CLASSIC SERIES

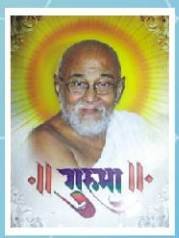

गुरु माँ

सद्गुरु

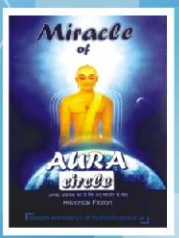

Miracle

यशोदा

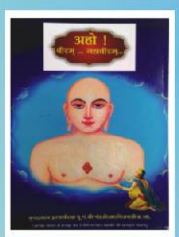

अहोवीरं

दक्षिण भारत

चेन्नई के चमकते सितारे

एक छोटा-सा ब्रेक

कर्म के विपाक
अतिभयावह होते है...
कर्म कब, किसको, कहाँ से,
क्युँ Attack करेगा,
इसका गणित मस्तिष्क से करना Possible नहीं है....
कर्म की भयंकरता को ही बतानेवाली
एक गर्भवती बहन की दास्तान !
हॉस्पिटल... डॉक्टर की भूल.... मृत्यु की निकटता....
भाग्य की चमक... मन का समाधान...
भावि की इच्छा.... इन सभी भावों को छूनेवाली पहेली!
इस कथा को पढने के बाद
भगवान के
समक्ष शब्द निकल पडेंगे..
"मेरे साथ ऐसा मन करना भगवान!"

आत्मकथा ADVENTURE SERIES

श्री कृष्ण

सीमंधरा

वंदे मातरम्-वंदे शासनम्

चंदनबाला व सुलसा

आत्मकथा - 1

आत्मकथा - 2

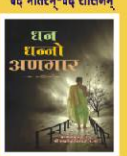

धन धन्नो अणगार

For More Books
visit Our
Website by Scan